1900

36.



॥ ओ३म् ॥

प्रायश्चित्तादर्श

प्रथमभाग

श्रीमान् पण्डित ज्वालादत्तशास्त्री

विरचित

जिसमें वेदादि शास्त्रानुसारप्रायश्चित्त निरूपण है

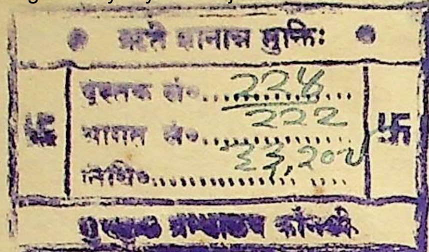
वैश्वदेवीं वर्चस आरभध्वं शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः । अति क्रामन्तो दुरिता पदानि शतं हिमाः सर्ववीरा मदेम ॥ अ० १२।२।२८

"आर्य्यमित्र" यन्त्रालय मुरादाबाद में मुद्रित

संवत् १९५७ वि०

प्रथमवार एकहजार | मूल्य ।) डाकव्यय)॥





भूमिका

आर्य्यावर्त्त देश जो किसी समय विद्या धन ऐश्वर्य और परम गुणों की खानिथा यह इस समय जैसे अन्यान्य दुःखों से दुःखित है वैसे विदेशी विपक्षियों की धर्मवञ्चनाओं से वञ्चित और पूर्ण विपत्ति में घिराहुआ है यह कौन नहीं जानता जैसे चिड़ीमार फन्दा लगाये हुये चिड़ियों को ताकि २ फांसता है वैसे जिनको यह पूर्ण विश्वास हो रहा है कि- आर्य्यावर्त्तीयजन कच्चे घड़े के समान हैं किसी न किसी उपाय से ला यह लौट के न जांयगे जन्मभर हमारे दास रहे हमारे आस पास फिरे और हमारी चपेटें सहेंगे । जो नाना उपायों से मुक्ति का प्रलोभन दे रहे हैं वह विदेशीय विपक्षी-जन शतशः फदों से आर्य्यावर्त्तीयजनों को उनके धर्म से डिगाय सदाचारसे भगाय कुचालमें लगाये मनमाने अधर्मकेफदोंमें फांसतेहैं । स्वाभाविक वृत्तिके अनुसार मनुष्यों की चित्तवृत्तिरूपी जलधि में जैसे अन्य २ वातों की तरंगे उठाकरती हैं वैसे धर्म की भीलहरें उठाकरती हैं। अतएव श्रद्धालु जन मुक्ति के लोभसे प्रायः विदे-शियों और विपक्षियों के फन्दे में फसकरि वहां कोरी कुचाल देखि तड़फते हैं। वेदविरुद्धमतीजन कुमतिसे लोगोंको धोखादे धर्मच्युत और कलङ्कित करते जाते हैं।

प्रत्येक मत मतान्तर के ठेकेदार पुराणवादी भाई तो न कान हिलाते न,कान हिलाने देते हैं साईगुसाई ईसाईमूसाई किसी जमात में रहे धर्ममें तर्ककरना काम नहीं वहीं रहो चल विचलन न होओ यही सुतरां जिनका सिद्धान्त है।

वेद शास्त्र पुराण उपपुराण सभी उच्चस्वर से गर्ज रहे हैं अधर्मी को अधर्म से बचाओ मलीनता छुड़ाओ वर्णधर्म में लाओ आओ दीन-वेदीन मनुष्यो ! प्रार्थना करो शुद्ध होओ वेद शिक्षा देरहा है।

पुनन्तुमा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः ।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदःपुनीहि मा ॥ यजुः ॥

संक्षेपार्थ—

मुझे देवजन और विचार के साथ बुद्धियां पवित्र करें समस्त प्राणी पवित्र करें। हे वेद वा ज्ञानके उत्पन्न करनेवाले परमात्मा आप मुझे पवित्र करें ॥ १ ॥ इत्यादि वेद में बहुत मन्त्र हैं जिनसे प्राणी शुद्ध होसकता है ध्यान देने का काम है। पौराणिक महाशय प्रतिज्ञा करते हैं।

अष्टादशपुराणानां कर्त्तासत्यवतीसुतः।

अठारह पुराणों के कर्त्ता सत्यवती सुत व्यासजी हैं जिन महाशयों को उक्त वाक्य शिरोधार्य्य माननीय है उनको विचारना चाहिये पुराणों में बहुत उपाय ऐसे हैं जो बात की बात में चाण्डाल तक को महात्मा बना सकते हैं वेदामंत्रपरिश्रम मलीन से मलीन जन महात्मा होसकता है—

जैसा स्कन्द पुराण में कहा हैं।

ऊर्ध्वपुण्ड्रोमृदाशुभ्रो ललाटेयस्यदृश्यते।
सचाण्डालोपि शुद्धात्मा यातिब्रह्मसनातनम् ॥

जिस के माथे में सफेद मिट्टी से बनाहुआ ऊर्ध्वपुण्ड्र (रामानन्दी तिलक) दीखता है वह चाण्डाल (भंगी) तक क्यों न हो अत्यन्त शुद्धात्मा होता और सनातन ब्रह्मको प्राप्त होता है।

पद्म पुराण में कहा है।

ऊर्ध्वपुण्ड्रं मृदासौम्यं ललाटेयस्यदृश्यते।
सचाण्डालोपि शुद्धात्मा पूज्यएवनसंशयः ॥

जिसके ललाट में मिट्टी से बना सुन्दर ऊर्ध्व पुण्ड दीखता है वह चाण्डाल भी शुद्धात्मा और पूजा करने योग्य होता है। इत्यादि वचन बहुत है यदि पुराणों में विश्वास होतो पुराणवादी भाई विलम्ब न करें विदेशीविपक्षियों का अत्याचार तड़फता हुआ जन वा ईसाई मुसाई कोई क्यों नहो न्हवाय धोय शुद्ध करि जिसके मस्तक में सुन्दर ऊर्ध्व पुण्ड्रखड़ा रामानन्दी तिलक लगावें निर्विशेष अशेष मलीनता खोय चाण्डालतक महात्मा होजायगा। मुझेतो आर्य्यसमाजी भाइयों के कारण वेदशास्त्र ढूंढना पड़ा जिसके अनुसार कई इष्ट मित्रोंकी आज्ञापाय और विशेषतर श्रीमान् वैश्य प्रसिद्ध मुन्शी इन्द्र

मणिजी जिन्हाने यवनों के पक्षों को विध्वंस किया उनके पुत्र श्री-युत नारायण दासजी रईश वा वकील मुरादाबादकी आज्ञा पाय यह प्रायश्चित्तादर्श प्रथम भाग संग्रह करि विद्वान् महात्माओं की सेवा में अर्पण करता और आशा करता हूं—

क्वचिदपिस्खलितंयदि मत्कृता विहाहिपश्यत पश्यत मुद्रणे ।
तदभिशोधयत क्षमयाबुधास्सुजनताजनता सुचयातया ॥ १

सूचना

प्रायश्चित्तादर्श के दूसरे भाग में और भी प्रायश्चित्तों का विचार तथा—प्रायश्चित्त विधान अच्छेप्रकार कहा है जिन महाशयों के पास प्रथम भाग पहुंचे वह दूसरे भागके लिये मुझे अवश्य सूचना दें—

इत्याशावान् भवदीयो

ज्वालादत्त शर्म्मा

श्री १०८ मद्दयानन्दसरस्वतीस्वामि लघु शिष्यः ।

ओ३म्

अथ प्रायश्चित्तादर्शः

तस्य प्रथमोभागः



विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रंतन्न आसुव ॥ १ ॥

यतो विश्वस्य जन्मादि यत्र विश्वं प्रतिष्ठते।
यो विश्वदुर्गतिं हन्ति तं नमामि परात्परम् ॥ २ ॥

अथ विविधकर्त्तव्यकर्म्मणां परित्यागेन संजात मालिन्यानां जनानां शुद्धये कानिचित् प्रायश्चित्तानि लिख्यन्ते।

---

१ देव—हे दिव्य गुणयुक्त (सवितः) चराचरको उत्पन्न करने वाले परमात्मा (नः) हमारे (दुरितानि) दुःखों (दुर्गतियों) को (परासुव) दूरकीजिये और (यत्) जो (भद्रम्) सुखहो (तत्) उसको (आसुव) प्राप्तकीजिये हमलोगों को दीजिये ॥ १ ॥

२ जिससे संसार का जन्म संसार की पालना और संसार का संहार होता है जिसमें संसार प्रतिष्ठा पाता है जो संसारकी दुर्गति का नाश करता है उस परात्पर प्रकृतिसे परे परमात्मा को प्रणाम करता हूं ॥ २ ॥

अब विविधप्रकार करनेयोग्य कामोंके छोड़नेसे मलीनता जिनको प्राप्तहुई उन मनुष्यों की शुद्धिके लिये कोई प्रायश्चित्त लिखेजाते हैं।

अकुर्वन् विहितं कर्म निन्दितं च समाचरन् ।
प्रसक्तश्चेन्द्रियार्थेषु प्रायश्चित्तीयते नरः ॥ ३ ॥

अथ किं नाम प्रायश्चित्तम् ।

प्रायोनाम तप प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते ।
तपोनिश्चयसंयुक्तं प्रायश्चित्तं तदुच्यते ॥ ४ ॥

तपो निश्चयस्तु ।

तपोद्वन्द्वसहनं द्वन्द्वश्च बुभुक्षापिपासे शीतोष्णे इत्यादि तत्र दुःखस्यैव भोगोयथा राज्ञांन्यायेनदण्डदुःखभोगात् पापनिवृत्तिनिश्चयस्तथा तपोनिश्चययुक्ते कर्मणि पापनिवृत्तिनिश्चयोतस्तत् प्रायश्चित्तमित्युच्यते

---

३ जो पुरुष श्रुतिस्मृतियों में कहेहुए कर्म को न करता और निन्दित कर्मको करताहुआ इन्द्रियों के विषयों में फसता है वह प्रायश्चित्त के योग्य होता है ॥ ३

४ प्रायश्चित यह नाम दोशब्दों से बना है उनमें प्रायःतपका नाम और चित्त निश्चय कहाता है इन दोनों का संयोग प्रायश्चित्त कहाता है ॥

द्वन्द्वज दुःख सहनेको तप कहते हैं और द्वन्द्व भूंखप्यास शीत गरमी इत्यादि कहाताहै इनके सहने में दुःखकाही भोगनाहै जैसे राजाओंके न्याय से दण्ड मिलता पाप का फल प्रबल दुःख भोगना होताहै अतएव पाप छूटनेका निश्चय कियाजाता वैसेही तप संयुक्त कर्म में पाप की निवृत्ति का निश्चय हैइस कारण यह प्रायः (तप) और चित्त (निश्चय) का संयोग प्रायश्चित्त कहाता है *॥ अथवा

भविष्यत् में पापकर्म न करने की प्रतिज्ञारूप कर्मकी निवृत्ति में

---

* विना भोगे कर्म फल नहीं होता है इस निश्चय के अनुसार प्रायश्चित्त में जो कष्ट भोगना है वही पाप फल भोगना है ॥

कर्मनिवृत्तौ तु चित्तग्लानिजन्यदुःख संसहनेनच संभवति पापिनां प्रायश्चित्तमिति ॥

प्रायश्चित्तोपदेशे फलम् ।

यत्पुण्यमुद्धृते विप्रे म्रियमाणे जलादितः ।
तत्पुण्यं तारिते पापात्प्रायश्चित्तैस्तु मानवे ॥ ५ ॥

प्रायश्चित्तानुपदेशे दोषः ।

आर्त्तानां मार्गमाणानां प्रायश्चित्तानि ये द्विजाः ।
जानन्तो न प्रयच्छन्ति तेपि तद्दोषभागिनः ॥ ६ ॥

अथ प्रायश्चित्ताधिकारविमर्शः ।

प्रायश्चित्ताधिकारः केषामिति विमर्शो धर्मशास्त्रो

जो चित्त की ग्लानि से उत्पन्न हुआ अकथनीय मानसीय दुःख उसके अच्छे प्रकार सहनसे अर्थात् रात्रि दिन चित्त को संताप होने से भी पापियों को प्रायश्चित्त होने का संभव है ॥

प्रायश्चित्त उपदेश देने में फल।

५—जलादि से मरतेहुए ब्राह्मण को बचादेने में जो पुण्य होता है वह प्रायश्चित्तों से मनुष्य को तारदेने में होता है। यह आङ्गिरा महर्षि जी का सिद्धान्त है ॥

प्रायश्चित्तके न उपदेश देने में दोष

६—महर्षिअङ्गिराजी कहतेहैं प्रायश्चित्तान्वेषण करते और कष्ट पातेहुए मनुष्योंको जो द्विज जानते हुए प्रायश्चित्त नहीं देतेहैं वे भी उस पाप के भागी होते हैं कि जिस जिस पाप से पीड़ित मनुष्य उनके शरण आया हुआ है ॥

अब प्रायश्चित्ताधिकार का विचार किया जाता है प्रायश्चित्त करनेका अधिकार किनकोहै इस विचार में धर्मशास्त्रोक्त प्रायश्चित्त

रूप्रायश्चित्तविधायकवाक्येषु प्रायशो वर्णविभाग कल्पनया ब्राह्मणादिवर्णजातानामधिकारोऽस्त्येव वर्णधर्मरहितानां पश्चात्तातप्यमानानां प्रायश्चित्ता- संभव इति चेत्तन्नोच्यते—

वेदे चराचरोत्पत्तौ मनुष्याणां चत्वारो वर्णा श्श्रूयन्ते तद्यथा यजुर्वेदे

ब्राह्मणोस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याᳬ शूद्रो अजायत ॥

अर्थः—अस्य विराजो मुखस्थानीयो ब्राह्मणः बाहू राजन्यः।ऊरूवैश्यः।पद्भ्यांशूद्रः इति।अत्र च- तुर्ष्वेव वर्णेषु मनुष्योत्पत्तिदर्शनान्मनुष्यजातौ

विधान करनेवाले जो वाक्य पाये जाते हैं उनमें प्रायः वर्णविभाग की कल्पना है ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र इन चारों वर्णों को अलग २ प्रायश्चित्तों का विधान है इससे ब्राह्मणादि वर्णों से जो प्रसिद्ध जन हैं उनको प्रायश्चित्त करने का अधिकार निस्संदेह है। यदि यह कहाजावे कि–वर्णधर्मसे रहित जो मनुष्य अपने कियेहुए कर्मों का पश्चात्ताप करते हैं उनको प्रायश्चित्त होना असम्भव है उनको अधिकार नहीं है इस विषय में कहना यह है—

वेद में चर अचर जगत् की उत्पत्ति के वर्णन में मनुष्यों के चार वर्ण (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र) सुने जाते हैं वहां मनुष्य जाति के चारही वर्ण कहे हैं सो इस प्रकार यजुर्वेद के बाईसवें अध्याय में कहा है—

विराट् रूप का मुखस्थानी ब्राह्मण बाहू क्षत्रिय जंघा वैश्य और पैरों से शूद्र अर्थात् पैरोंका स्थानी शूद्र है।

पञ्चमवर्णाभावाद् धर्मरहिता अपि जनाश्चतुर्वर्ण सांकर्यादेतेष्वेव वर्णेष्वन्तर्भूता न तेभ्यः पृथक् सन्तीति ॥

शुक्राचार्येण भगवता शुक्रनीतौ—

चतुर्द्धा भेदिता जातिर्ब्रह्मणा कर्मभिः पुरा
तत्तत्सांकर्यसांकर्यात्प्रतिलोमानुलोमतः ॥ ८ ॥
जात्यानन्त्यं तु संप्राप्तं तद्वक्तुं नैव शक्यते ॥ ९ ॥

ततो वर्णधर्मरहिता वृषला अपि विशेषा नव गतेश्शूद्रोक्तं प्रायश्चित्तमर्हन्ति ॥

जावालिः

अकामकृतपापानां वदन्ति ब्राह्मणा व्रतम् ।
कामकारकृतेप्येके द्विजानां वृषलस्य च ॥ १० ॥

इसमन्त्र में चारही वर्णों में मनुष्यों की उत्पति देखने और मनुष्य जातिमें पांचवें वर्णका अभाव होने से वर्णधर्म रहित मनुष्य भी चारो वर्णोंके मेल संकर भावसे इन्हीं वर्णोंके अन्तर्गत हैं उनसे अलग नहीं हैं ।

भगवान् शुक्राचार्य जी ने शुक्रनीति ग्रन्थ में यह कहा है—

८-९-प्रथम कर्मोंके अनुसार मनुष्य जातिके चारभेद ब्रह्मने किये उनजातियों की बार २ मिलावट से और इस मिलावट में प्रतिलोम अनुलोम भाव से अनेक जाति होगई सो कही नहीं जासकती ।८।९।

इससे वर्णधर्म रहित वृषल मनुष्य भी विशेष धर्म अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रियादि के न बोध होने से धर्मशास्त्रोक्त शूद्रविषयक प्रायश्चित के योग्य होते हैं ॥ महर्षि जावालि जी कहते हैं ।

१०-ब्राह्मण धर्म शास्त्रके कहने वाले महर्षि जन उन द्विजों के

अथ के वृषला इति मनुना प्रतिपादितम्—
शनकैस्तु क्रियालोपादिमाः क्षत्रियजातयः ॥
वृषलत्वं गता लोके ब्राह्मणादर्शनेन च ॥ ११
पौंड्रकाश्चौंड्रद्रविडाः काम्बोजा यवनाश्शकाः ।
पारदाःपल्हवाश्चीनाः किराता दरदाः खशाः १२
मुखवाहूरुपज्जानां या लोके जातयो बहिः ।
म्लेच्छवाचश्चार्यवाचस्सर्वे ते दस्यवः स्मृताः १३
इत्थं मनुष्यमात्रस्य यथाभेदं चतुर्वर्णेष्वन्त-

जिन्होंने विनाइच्छा पाप किया है व्रत करने का उपदेश देते हैं कई एक आचार्य उनद्विजों को जिन्हों ने इच्छा से पाप और जो वृषल वर्ण धर्म रहित हैं उनको भी व्रतोपदेश देतेहैं॥ वृषल कौन हैं मनुकहतेहैं

११—धीरे२ वैदिक धर्म कर्म के लोप होनेसे और ब्राह्मणों के अदर्शनसे ब्राह्मणोंका उपदेश न मिलने से लोक में यह क्षत्रियजाति वृषलपनको प्राप्त हुई अर्थात् वर्णधर्म रहित हुए नानादेशो में बसते हुए म्लेच्छजाति कहाये ॥ ११ ॥

१२—पौंड्रक चौंड्र द्रविड़ काम्बोज (काबुलिया) यवन (तुर्क) शक (शका) पारद पल्हव चीन (चीनदेशी) किरात (वहेलिया भीलआदि) दरद और खश यह देश भेद में भूमण्डल में फैले हुए मनुष्यों की संज्ञा हुई जिन्हें इस समय मुशलमान अंगरेज चोर गोर अनेक नामों से कहते हैं ॥

१३—ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्रों मे से जो जाति धर्म कर्म से बाहर होगई जिनसे वैदिक कर्म छूटिगया म्लेच्छोंकी वाणी बोलने लगे आर्यावर्त्त देशकी वाणी बोलते हुएभी वैदिक कर्म रहित हुए वह दस्यु वृषल वर्ण धर्म रहित कहाये ॥ १३ ॥

इस प्रकार मनुष्य मात्र को चार वर्णोंमें अन्तर्गत होने से

भूतत्वाद्यथान्यायं धर्ममभीप्सून् धर्मे नियोजयेन्न-
कस्य चिद्धर्म विमुखतोचिता किन्तु सर्वेषामशुद्धि
निवृत्तिपूर्वकधर्मप्रवृत्तिरेवोचिता ॥

भगवान् शङ्खाचार्यः

आयत्तो ब्राह्मणानां यो वृत्तिं यश्च प्रयच्छति ।
ब्राह्मणानां च यो भक्तः स तार्यः सर्वयत्नतः ॥ १४

शाण्डिल्यमहर्षेर्भक्ति मीमांसायां तु म्लेच्छादि
संसर्गाज्जातमालिन्यानामनिन्द्ययोनिसंभूताना
मपि नास्तिक्यपरिहारपूर्वकमास्तिक्याश्रयेणेश्वर
भक्त्यधिकारोऽहिंसासामान्यधर्मावाप्तिश्चदृश्यते।
यथाह शाण्डिल्यः

यथान्याय धर्म के अभिलाषी जनों को धर्म के निमित्त आज्ञा देवे किसी का धर्म विमुख होना उचित नहीं किन्तु सबकी अशुद्धि छूटना धर्म में प्रवृत्ति होनाही उचित है ॥

१४—शङ्खाचार्य जी कहते हैं जो ब्राह्मणों के आधीन हो जो ब्राह्मणों को जीविका देता हो और जो ब्राह्मणोंका भक्त हो वह सर्व यत्न से तारने योग्य है ॥

शाण्डिल्य महर्षिजी ने भक्तिमीमांसाग्रन्थ बनाया उसमें तो म्लेच्छों के संसर्गसे जिनको मलीनता प्राप्त हुई हो उनको और निन्द्य योनियों में उत्पन्न हुए नरोंको भी नास्तिकपन छोटने और आस्तिकपन अर्थात् वैदिक धर्मकर्म में श्रद्धा करने और ईश्वर का आश्रय करने से ईश्वर की भक्ति करनेका और हिंसा आदि अधर्म छोड़ना इत्यादि सामान्य धर्म की प्राप्ति दीखती है । जैसा महर्षि शाण्डिल्य जी कहते हैं ।

आनिन्द्ययोन्यधिक्रियते पारम्पर्यात् सामान्यवत् ॥ भक्ति० अ० २ आ० ॥ १३ ॥

अत्रतद्भाष्यकारस्वप्नेश्वराचार्य्यः ।

निन्दितचाण्डालयोनिपर्यन्तं भक्तावधिक्रियते संसारदुःखजिहासाया अविशेषात् । अथ वेदाध्ययनानधिकारात् कथं वर्णधर्मरहितानां स इति चेत्तत्राह पारम्पर्य्यादिति । चोदनालक्षणोर्थोधर्मः । शास्त्रयोनित्वादितिन्यायादलौकिकोर्थः श्रुत्यैकः समधिगम्यत इत्यत्र न विप्रतिपद्यामहे किन्तु

१३—संसार दुःख छोड़ने की इच्छा सब को समान होती है और परम्परा से उपदेश भी सभों को हो सकता है अतएव निन्दित योनि पर्यन्त जनों को ईश्वरभक्ति करने का अधिकार है ॥

इसी सूत्र पर भक्ति मीमांसा शास्त्र के भाष्यकार स्वप्नेश्वराचार्य्य जी कहते हैं—

संसार दुःख छोड़ने की इच्छा सबको समान होती है इससे निन्दित चाण्डाल योनि पर्यन्त जनों को ईश्वर की भक्ति करने का अधिकार है तो संदेह यह है कि—वेद पढ़ने का अधिकार विवेक के साथ होने से वर्णधर्मरहित वेद के अनधिकारी मनुष्यों को ईश्वर भक्ति करने का अधिकार कैसे होसकता है इस संदेह की निवृत्ति के लिये शाण्डिल्याचार्यजी 'पारम्पर्यात्' ऐसा पद सूत्र में देते हैं। अर्थात् परम्परा से उपदेश द्वारा होसकता है। मीमांसाकार जैमिनि जी कहते हैं (चोदना लक्षणः) प्रेरणा देना उपदेश करना जिस का लक्षण है वह अर्थ धर्म कहाता है। वेदान्त शास्त्र बनाने वाले व्यास जी कहते हैं शास्त्रों का मूल कारण वेद है इस न्याय से जो एक अलौकिक (लोक में नहीं जाना) अर्थ है वह वेद से जाना जाता है

स्त्रीशूद्रादीनां चाण्डालादीनां च स्मृत्याचारव-दुपदेशपारम्पर्येण ज्ञानमपि श्रुतिमूलकमेव भवति यथा तेषां सामान्याऽहिंसाधर्मादिज्ञानमन्यथा तद्दसिद्धिप्रसङ्गादिति ॥

अनेन सूत्रभाष्यसंदर्भेण स्पष्टएव मनुष्यमात्र-स्येश्वरभक्तावधिकारस्सत्कर्मसु प्रवृत्तिः प्रायश्चित्ता-चरणं पापनिवृत्तये संशुद्धिप्राप्तये च सा पापनि-वृत्तिस्संशुद्धिप्राप्तिश्चेश्वरभक्त्या सुलभेति विभाव-यन्तु सुधियः ॥ *

इस अंशमें हमारा सिद्धान्त दूसरा नहीं है किन्तु स्त्री शूद्रादि और चाण्डाल आदि जनों को धर्मशास्त्र के आचार के तुल्य उपदेश की परम्परासे जो ज्ञान होता है वह भी वेदमूलक है जैसा उन स्त्रीशूद्रादिकों को अहिंसा धर्म आदि कर्म्मों का ज्ञान होता है वैसा सभोंको समान है वह वेदोक्त धर्मोपदेश के विना नहीं होसकता है ॥

इस भक्ति मीमांसा सूत्र और उसके भाष्य की रचना से मनु-ष्य मात्र को ईश्वर की भक्ति करने का अधिकार और अच्छे कामों में प्रवृत्ति करना सिद्ध है । और प्रायश्चित्त का आचरण पापनिवृत्ति और उत्तम शुद्धि प्राप्ति होनेके लिये किया जाता है वह पापनिवृत्ति और उत्तम शुद्धि की प्राप्ति ईश्वरभक्ति से सुलभ है इसको विद्वान् बुद्धिमान् पुरुष विचारें ॥

* ध्यान में रखना चाहिये प्रायश्चित्त करने का तात्पर्य यही है पाप की वासना जो चित्तवृत्ति में लगी है वह छूटे । अशुद्धि नि-वृत्ति हो अच्छे धर्म कर्म में प्रवृत्ति हो । इस समस्त अभिलाषा के पूरण करने को ईश्वरभक्ति से बढ़ि कर कोई उपाय नहीं है ईश्वर भक्ति से उक्त अभिलाषा सुलभ है ।

अत्र पुराणव्यवस्थापि स्कन्दपुराणे यथा–
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यश्शूद्रो वा यदि वेतरः ।
विष्णुभक्तिसमायुक्तो ज्ञेयः सर्वोत्तमोत्तमः ॥ १७
दुराचारोपि सर्वाशी कृतघ्नो नास्तिकः शठः ।
समाश्रयेदादिदेवं श्रद्धया शरणं हि यः ॥ १८ ॥
निर्दोषं विद्धि तं जन्तुं प्रभावात् परमात्मनः ॥१९॥
अन्यच्च–अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोपिवा ।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स वाह्याभ्यन्तरः शुचिः २०
प्रौढ़वादेनापि–हरेर्नामैवनामैव नामैव ममजीवनम्

इस अंशमें पुराणव्यवस्था भी यह है जैसा स्कन्दपुराण में कहा है–

१७—ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र यदि वा शूद्रसे नीचीदशा वाला हो पर विष्णुजी का भक्त होतो वह जनसव उत्तमों में उत्तम है ॥

१८—दुराचार-दुष्ट आचरणों वाला सर्वाशी सबका अन्नखाने वालाकृतघ्नी-अपराध करके न मानने वाला नास्तिक-ईश्वरसे विमुख ईश्वर को न मानने वाला और शठ महामूर्ख भी हो पर श्रद्धासे विष्णु भगवान् के शरणागत होतो—

१९—उस प्राणीको परमात्मा के प्रभाव से निर्दोष जाने वह सब दोषों से रहित उत्तमोत्तम है ॥

और भी कहा है—

२०—अपवित्रहो वा पवित्र हो ऊंची नीची किसी दशामें क्यों न हो जो पुण्डरीकाक्ष कमलनयन भगवान्का स्मरण करे वह पुरुष बाहर भीतर सब प्रकार शुद्ध है ॥

और भी प्रौढवाद (अनन्य भक्ति) से कहा है

२१—हरि विष्णु भगवान् का नामही मेरा जीवन है नामही मेरा

कलौनास्त्येवनास्त्येवनास्त्येव गतिरन्यथा ॥ २१ ॥

अथर्ववेदे—

प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु। प्रियं सर्वस्य पश्यत। उत शूद्रे उतार्ये ॥ २२ ॥ अथ०

ऋग्वेदे—

आरे अस्मदमतिमारे अंहआरे विश्वां दुर्मतिं यन्निपासि। दोषाशिवः सहसः सूनो अग्ने यं देव

जीवन है नामही मेरा जीवन है कलियुग में और उपायसे गति नहीं है नहीं है नहीं है ॥ +

अथर्व वेद में कहा है।

२२—मनुष्य मात्रको प्रार्थना करनी चाहिये हे परमात्मन्! विद्वान् ब्राह्मणों और राजाओं में मुझ को प्रिय (पियारा) कीजिये। हे मनुष्यो तुम मुझको उत्तम अनुत्तम मनुष्य मात्र में सबका प्रियदेखो ॥ तात्पर्य यह है जो सबका प्रिय होना चांहे वह कहींहो अपने शुद्धाचरण रक्खे दुराचारी दुष्ट मनुष्य से सब प्रीति नहीं करते हैं ॥

ऋग्वेद में कहा है—

२३—हेबल के शुद्ध करनेवाले अग्नि परमात्मा यतः आप हमलोगों को निरन्तर पालतेहो इसकारण सुखस्वरूप दिव्य गुणोंवाले आपसुख से जिनका सम्बन्ध कराते अर्थात् सुख देनेवाले आप रात्रिदिन जनों को सुखसे युक्त करते हैं उन हम लोगों से अमति मूढपन दूर करो

+अब पुराण मतालम्बी भाई तो व्यर्थ में बड़ेर पोथा लौटें पौटें और उपाय ढूंढे यदि विश्वास होतो ब्राह्मण से लेकर नीचजन तक शुद्ध करने के लिये उनको केवल हरिजी का नाम स्मरण करानाही सुगम उपाय है ॥ आर्य भाइयो! तुम्हें वेदपक्ष मानना है अतएव वेदव्यवस्था भी देखो।

आचित् सर्चसे स्वस्ति ॥ २३ ॥ ऋ० मं० ४ ।

होमेन्तिमप्रार्थना—

ओं यदस्य कर्मणोत्यरीरिचं यद्वान्यूनमिहाकरम् । अग्निष्टत् स्विष्टकृद् विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतुमे । अग्नये स्विष्टकृते सहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान् समर्द्धय स्वाहा ॥ २४ ॥

गर्भाधानसंस्कारेपि—

ओमग्ने प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्म-

पापको दूर करो और समस्त दुर्मति दुष्टमति पाप करने की बुद्धि को दूर करो अर्थात् मेरी पाप करने की इच्छा नहो मुझमें पाप करनेकी मति न उत्पन्न हो मैं सब अशुद्धियों से दूर रहूं ॥

हवन में अन्तिम प्रार्थना

२४—जो मैंने इस कामका कोई अंश छोड़ा हो अथवा जो मैंने इस में न्यूनता किई हो उसको उत्तम अभीष्ट देने वाला परमात्मा जानें मेरे किये हुए सब काम को और यज्ञको उत्तमोत्तम करदे । मैंने प्रायश्चित्त के निमित्त जो आहुतियां दिई उन सबकी और सब कामों की समृद्धि करने वाले परमात्मा के लिये सुहुत हों अर्थात् यह किया हुआ हवन परमात्मा की प्रीति के लिये हो । हे परमात्मन्! हमारे सब कामोंकी समृद्धि कीजिये । गर्भाधान संस्कार में बीश मन्त्र प्रायश्चित्त विधान में आते हैं जिनका प्रथम मन्त्रार्थ यह है ।

२५—हे परमात्मन् अग्नि प्रायश्चित्त रूप प्रायश्चित्त की सिद्धि कराने वाले आप देवों मे प्रायश्चित्त रूप हैं मैं ब्राह्मण, स्वामी चाहने वाला आपके शरणागत होता हूं जो इस स्त्रीकी पापरूप शरीर

णस्त्वा नाथकाम उपधावामि यास्याऽ पापीयसी लक्ष्मीस्तनूस्तामस्या अपजहि स्वाहा ॥ २५ ॥ इत्यादि विंशतिमन्त्रास्सन्ति॥ एभिस्सर्वैरनुमीयते प्रायश्चित्तकर्म वेदसम्मतम् ॥

अकामतः कृतं पापं वेदाभ्यासेन शुध्यति।
कामतस्तु कृतं मोहात् प्रायश्चित्तैः पृथग्विधैः २६

अथानेकविधपातकोपपातकानां प्रायश्चित्तनिर्णये संसर्गि प्रायश्चित्तमाह महर्षिर्देवलः

अपेयं येन संपीतम भक्ष्यं येन भक्षितम्।
म्लेच्छैर्नीतेन विप्रेण ह्यगम्या गमनं कृतम् ॥२७॥

कान्ति हो उसको दूर कीजिये। इन सब मन्त्रोंसे अनुमान है कि— प्रायश्चित्त कर्म वेदसम्मत वेदसिद्धान्त है ॥

२६—विना इच्छा जो पाप किया हो वह वेदके अभ्याससे (वेद के पाठसे) छूटजाता है और मूर्खता के कारण जो इच्छा से किया है वह अलग२ कहेहुए प्रायश्चित्तों से छूटता है यह मनुभगवान्‌का सिद्धान्त है ॥

अब अनेक पातक और उपपातकों के प्रायश्चित्त निर्णय में देवल महर्षिजी संसर्गि प्रायश्चित्त (दूसरे के संग दोषसे जो पाप होताहै उसका प्रायश्चित्त) कहते हैं *

२७—ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यइनमें म्लेच्छोंने जिसको ग्रहणकिया हो उसने जो न पीने की वस्तु पिई और न खाने की वस्तु खाईहो तथा अगम्या (जिनसे योग्यनहीं) स्त्रियों से गमन कियाहो और वह काम

---

* यह प्रायश्चित्त उस समय में है जब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रों को म्लेच्छों का संसर्ग हुआ और उसका विवेक नहीं कैसे हुआ पर प्रायश्चित्ती अपनी शुद्धि चाहता हो ॥

Mangal Datta Sharma

तस्य शुद्धिं प्रवक्ष्यामि यावदेकं तु वत्सरम् ॥ २८ ॥
चान्द्रायणं तु विप्रस्य सपराकं प्रकीर्त्तितम् ।
क्षत्रियस्य पराकैकं पादकृच्छ्रेण संयुतम् ॥ २९ ॥
पराकार्द्धन्तु वैश्यस्य शूद्रस्य दिनपञ्चकम् ।
नखलोमविहीनानां प्रायश्चित्तं विधीयते ॥ ३० ॥

अथाहिताग्नेरनाहिताग्नेर्व्यवस्था—

प्रायश्चित्ते द्विजातौ तु प्राजापत्यं विशोधनम् ।
चान्द्रायणं वाहिताग्नेः पराकस्त्वथवा भवेत् ॥३१॥
चान्द्रायणं पराकं च चरेत् संवत्सरोषितः ।
संवत्सरोषितश्शूद्रो मासार्द्धं यावकं पिबेत् ॥ ३२ ॥

२८–एकवर्षतक हुआहो उसकी शुद्धि कहताहूं उक्तअशुद्धिमें ।

२९ ब्राह्मण को पराक व्रत के साथ चान्द्रायणव्रत और क्षत्रिय को चतुर्थांशकृच्छ्रव्रतके साथ एक पराकव्रत करना उचित है ॥

३० आधा पराक व्रत वैश्य को और शूद्रको पांचदिन निराहार व्रत करना चाहिये । उक्त प्रायश्चित्त नख और केशों को दूर कराये हुये चारोंवर्णों को कहे हैं अर्थात् प्रायश्चित्त करनेवाले को योग्य है कि–प्रायश्चित्त करने के प्रथम नख और केश दूर करादे ॥

अब जिन्होंने अग्निहोत्र करने के लिये अग्न्याधान किया हो वा जिन्होंने नहीं किया उनके भेद से व्यवस्था दिखलाते हैं—

३१ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इन वर्णों के निमित्त प्रायश्चित्त निश्चय कियाजाय तो प्राजापत्य व्रत विशेष शुद्ध करनेवाला है परन्तु जिस ब्राह्मण क्षत्रिय वा वैश्यने अग्निहोत्र करनेकेलिये अग्न्याधान किया हो उसकी शुद्धिकेलिये चान्द्रायण व्रतवा पराकव्रत होना चाहिये ॥

३२ वह अग्न्याधान करनेवाला पुरुष यदि एकवर्ष म्लेच्छोंमें रहा हो तो चान्द्रायण और पराक दोनो व्रत करे ॥ शूद्र यदि एक वर्ष रहाहो तो पन्द्रहदिन यवों की रावड़ी पिये तो शुद्ध होता है ॥

मासमात्रोषितः शूद्रः कृच्छ्रपादेन शुध्यति ।
ऊर्ध्वं संवत्सरात् कल्प्यं प्रायश्चित्तं द्विजोत्तमैः ॥३३॥

संवत्सरादूर्ध्वं वर्षद्वयं वर्षत्रयं म्लेच्छसंसर्गे पूर्वोक्तमेव द्विगुणं त्रिगुणं कल्प्यमित्यर्थः ।

अथ बलात्कारेण म्लेच्छैर्गृहीतेन मालिन्यं प्राप्तेन द्विजेन शूद्रेण च किं कर्त्तव्यमित्याहापस्तम्बः ।

बलाद्दासीकृतो म्लेच्छैश्चाण्डालाद्यैश्च दस्युभिः ।
अशुभं कारितं कर्म गवादिप्राणिहिंसनम् ॥ ३४॥
उच्छिष्टमार्जनं चैव तथा तस्यैव भक्षणम् । तत्
स्त्रीणां तथा सङ्गस्ताभिश्च सह भोजनम् ॥ ३५ ॥

---

३३ एकमहीने शूद्र म्लेच्छोंमें रहाहो तो चतुर्थांश कृच्छ्रव्रत करे तो शुद्ध होताहै । एकवर्ष से ऊपर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र म्लेच्छों में रहे हों तो उनके लिये उत्तम ब्राह्मण प्रायश्चित्त की कल्पना करें ॥ संवत्सर के ऊपर दो वर्ष वा तीन वर्ष जबतक म्लेच्छोंका संसर्ग उक्त वर्णों को रहाहो तो जिसवर्णके लिये जो प्रायश्चित कहा है उसे दूना वा तिगुना करिदेवे ॥ अब बलात्कार (अपने साहस छलकपट वा धोखा देकर) म्लेच्छजनों (ईसाई मूशाई आदि दुर्जनों) ने जिसको पकड़ धर्मच्युत करदिया मलीनता को प्राप्त हुआ उस ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रको क्या करना चाहिये इसको आपस्तम्ब जी आचार्य्य कहते हैं—

३४ बलसे म्लेच्छ चाण्डाल(ईशाई मूशाई भंगी डोम कंजर)आदि वा डाकुओं ने जिसको अपनादास बनालिया हो अयोग्य निन्द्यकाम कराया हो गौ आदि प्राणियों की हिंसा कराई हो —

३५ अपनी झूंठन बुहरवाई हो और झूंठन खवाई हो उनकी स्त्री वेश्या कंजरनी डोमनी वा भङ्गिनियोंका सङ्ग हुआहो उनसे विषय भोग किया हो उन स्त्रियों के साथ खातापीना हुआ हो तो — ॥

कृच्छ्रान् संवत्सरं कृत्वा सान्तपनान् शुद्धिहेतवे ।
ब्राह्मणः क्षत्रियस्त्वर्द्धं कृच्छ्रान् कृत्वाविशुध्यति।३६।
मासोषितश्चरेद् वैश्यश्शूद्रःपादेन शुध्यति ॥ ३७॥
पुनः पुरुषविषये प्रकारान्तरमाह महर्षिर्देवलः
गृहीतो वा बलान्म्लेच्छैस्स्वयं वा मिलितस्तुयः
वर्षाणिपञ्चसप्ताष्टौ शुद्धिस्तस्य कथं भवेत् ॥३८ ॥
प्राजापत्यद्वयं तस्य शुद्धिरेषा प्रकीर्त्तिता ।
अतः परन्नास्तिशुद्धिः कृच्छ्रमेव सहोषिते॥ ३९ ॥

---

३६ ब्राह्मण अपनी शुद्ध के लिये एक बर्ष पर्यन्त कृच्छ्रसान्तपन व्रतकरे और उसीव्रतको क्षत्रिय छःमहीने करेतो शुद्धहोसकता है ॥

३७ एक महीने कृच्छ्रसान्तपन व्रत करने से वैश्य और एक सप्ताह व्रत करनेसे शूद्र शुद्ध होता है ॥ यह महर्षि आपस्तम्ब आचार्य का सिद्धान्त है*फिर भी पुरुष विषय में महर्षिदेवल आचार्य दूसरे प्रकार को कहते हैं ॥

३८ म्लेच्छों ने जिसको बलसे लियाहो अथवा जो आप म्लेच्छों में जामिला हो और वह पांच सात आठ बर्ष तक उनमें रहा हो उसकी शुद्धि किस प्रकार हो ? इसका उत्तर यह है —।

३९ दो प्राजापत्यव्रत होना चाहिये यही उसकी शुद्धिकही है । इसके उपरान्त और शुद्धि नहीं है । जो म्लेच्छों के साथ केवल रहाहो उनका अन्न न खाया हो न उनके साथ से कोई दुष्कर्म हुआ हो तो एक कृच्छ्रसान्तपन व्रत करना चाहिये ॥

---

* ध्यान देना चाहिये बहुत ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र म्लेच्छों के भ्रष्ट किये हुये तड़फ रहे हैं भोलेभाले पौराणिक पण्डित महाशयों को प्रायश्चित ढूंढे नहीं मिलते विदेशी विधर्म्मियों को विश्वास हो रहा है कि आर्य्यावर्तीयजन कच्चे घड़े हैं एकवार किसी प्रकार भ्रष्ट होगया वह लौटकर अपने दल में न जायगा पूरा बलदेओ भ्रष्टकरो ईसाई मूसाई कुछ बनालो लो आर्य्यावर्त्त अपने हाथ में है ॥

म्लेच्छैस्सहोषितो यस्तु पञ्चप्रभृतिविंशतिम् ।
वर्षाणि शुद्धिरेषोक्ता तस्य चान्द्रायणद्वयम् ॥ ४० ॥
कक्षा गुह्यं शिखा श्मश्रु चत्वारि परिवापयेत् ।
प्रहृत्य पाणिपादान्तान् नखान् स्नातस्ततः शुचिः ॥ ४१ ॥
इदं समस्तदेहवपनोपलक्षणं बोध्यम्। पाणिपादान्तान् नखान् प्रहृत्योत्तार्य स्नातश्शुचिरिति ॥

अत्र वपनविषये विशेषमाह यमः—

राजा वा राजपुत्रो वा ब्राह्मणो वा बहुश्रुतः ।
अकृत्वा वपनं तेषां प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ ४२ ॥
तिलहोमं तु कुर्वीत जपं कुर्यादतन्द्रितः ।
विष्णोरराटमन्त्रेण प्रायश्चित्ती विशुध्यति ॥ ४३ ॥

---

४० और जो म्लेच्छों के साथ पाँच वर्ष से वीश वर्ष तक रहा हो उसकी शुद्धि के लिये दो चान्द्रायण व्रत हों यही शुद्धि कही है ॥

४१ प्रायश्चित्ती पुरुष कांख के बाल गुह्यस्थान के बाल शिखा चोटी और दाढी के बालों को पहिले मुडवावे और हाथ पैरों के नखों को कटवा करि पीछे स्नानकरे तो शुद्ध होता है ॥

यह मुण्डन विधि समस्त देह के बालों को मुण्डन कराने के समान है। बालमुडाना वा नख उतरवाना पीछे स्नानकरि शुद्ध होना यह प्रायश्चित्तान्त अङ्ग है ॥

इस मुण्डन के विषय में यम जी ने विशेष कहा है—

४२ राजा वा राजकुमार वा ब्राह्मण जो बहुश्रुत (बहुत वेदशास्त्र जिसने सुना है) इनको मुण्डन के विना प्रायश्चित्त का उपदेश करे ॥

४३ उक्त प्रायश्चित्त में तिलों से हवन तो अवश्यकरे और निरालस होकर विष्णोरराट् जो यजुर्वेद में मन्त्र है उसका जपकरे तो प्रायश्चित्ती पुरुष शुद्ध होता है ॥

बहुनात्र किमुक्तेन तिलहोमो विधीयते ।
तिलान्दत्वा तिलान्भुक्त्वा कुर्वीताघनिवारणम् ॥४४
सुवर्णदानं गोदानं भूमिदानं तथान्हिकम् ।
विप्रेभ्यः संप्रयच्छेत्तु प्रायश्चित्ती विशुध्यति ॥४५॥

अथ स्त्रीविषये निर्णयः

गृहीत्वा स्त्री बलादेव म्लेच्छैर्गुर्वी कृता यदि ।
गुर्वी न शुद्धि माप्नोति त्रिरात्रेणेतरा शुचिः ॥ ४६ ॥
योषा बिभर्त्ति या गर्भं म्लेच्छात् कामादकामतः ।
ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या तथा वर्णेतरा अपि ॥४७॥
अभक्ष्यं भक्षितं चापि तस्याः शुद्धिः कथं भवेत् ।

---

४४ बहुत कहने से क्या है प्रायश्चित्त में तिलोंका होम विधान किया है तथा तिलोंका दान और तिलोंका भोजन करि पापनिवारण करना चाहिये ॥

४५ जबतक प्रायश्चित्त करे तबतक नित्य २ ब्राह्मणों के लिये सुवर्ण दान गोदान और भूमिदानदे तो प्रायश्चित्त करने वाला शुद्ध होता है ॥

अब स्त्री के विषय में निर्णय यह है—

४६ यदि कभी छीन झपट वा छल कपट से कोई उत्तम कुलकी स्त्री म्लेच्छों ने गर्भवती करदिई होतो वह गर्भवती स्त्री जबतक उसके पेटमें गर्भ है तबतक शुद्धि नहीं पाती और जो गर्भवती नहीं किई बिनागर्भ म्लेच्छों का साहस जिसपर हुआ हो वह स्त्री तीन दिनों में शुद्ध होजाती है ॥

४७ जो ब्राह्मणी क्षत्रिया वैश्या वा शूद्रा स्त्री इच्छा वा अनिच्छा से म्लेच्छ ईशाई मूशाई अताई पुरुषों से गर्भको धारणकरती है—॥

४८ और अयोग्य वस्तु खाती पीती रही है उसकी शुद्धि किस प्रकार हो ? उत्तर—वह स्त्री कृच्छ्सान्तपन व्रत करे शुद्ध स्वच्छयी

कृच्छ्रं सान्तपनं शुद्धघृतैर्योनिविपाचनम् ॥ ४८ ॥
असवर्णात्तुयो गर्भो स्त्रीणां योनौ निषिच्यते।
अशुद्धा सा भवेन्नारी यावच्छल्यं न मुञ्चति ॥४९ ॥
विनिस्सृतेन शल्येन रजसो वापि दर्शने।
तदाशुध्येतसानारी विमलं कांचनं यथा ॥ ५० ॥
तद्गर्भं दीयतेन्यस्मै स्वयं ग्राह्यं न कर्हिचित्।
स्वजातौ वर्ज्जयेद्यस्मा च्छङ्करस्यादतोन्यथा ॥ ५१ ॥
अथ प्रायश्चित्ताङ्गभूतान् यमान्नियमाँश्चाह—

योगी याज्ञवल्क्यः

ब्रह्मचर्य्यंदयाक्षान्तिर्दानं सत्यमकल्कता। अहिंसा स्तेयमाधुर्य्ये दमश्चैतेयमाःस्मृताः॥५२॥इतियमाः।

योनि में गेरे तो शुद्ध होसकती है ॥

४९ जो पुरुष अपने वर्णके अनुकूल नहीं है उससे जो गर्भ स्त्रियोंको मिलता है उस गर्भ को जबतक स्त्री नहीं छोड़े तबतक वह अशुद्ध रहती है ॥

५० जब गर्भ निकलजाय बालक उत्पन्न होजाय पीछे उससे छूटीहुई स्त्री स्वाभाविक मासिकधर्मको पुनः प्राप्तहोती है तबवह जैसे अग्नि में सुवर्ण शुद्ध होजाता है ऐसे शुद्ध होजाती है ॥

५१ वह गर्भ अर्थात् उस गर्भसे जो बालकहुआ वह औरके लिये दियाजाता अपनेको कभी लेने योग्य नहीं इसकारण कि—और प्रकार वर्त्तावसे अपनेवंशमें वर्णसंकरता होजावे इससे न लेवे॥

५२ ब्रह्मचर्य्य दया क्षान्ति (दूसरे के कटुवचन सुनिकर सह जाना) दानदेना सत्यव्रत धारणकरना मीठे वचन बोलना इन्द्रियों को वश में रखना। यह यम हैं ॥

५३ स्नान करना मौनरहना उपवास करना हवन करना वेद

स्नानंमौनोपवासेज्या स्वाध्यायोपस्थनिग्रहः। विधिवद्गुरुशुश्रूषा शौचाक्रोधाप्रमादता५३इतिनियमाः ।
महाव्याहृतिभिर्होमः कर्त्तव्यः स्वयमन्वहम् ।
अहिंसा सत्यमक्रोध मार्जवं च समाचरेत् ॥५४॥
त्रिरन्हिस्त्रिर्निशायांच सवासाजलमाविशेत् ।
स्त्रीशूद्रपतितांश्चैव नाभिभाषेत कर्हिचित् ॥५५॥
स्थानासनाभ्यां विहरेदशक्तोधश्शयीत वा ।
ब्रह्मचारी व्रती च स्याद् गुरुदेवद्विजार्चकः ॥५६॥
सावित्रीं च जपेन्नित्यं पवित्राणि च शक्तितः।
सर्वेष्वेव व्रतेष्वेव प्रायश्चितार्थमादृतः ॥ ५७ ॥

पाठकरना स्त्री प्रसङ्ग न करना गुरूजीकी उचित सेवा करना शुद्धि राखना क्रोध छोड़ना प्रमादछोड़ना और कुटिलपन छोड़ना। यह सब नियम हैं व्रत करने वाला उक्त यम नियमों के साथ व्रत करेतो व्रत का पूराफल होता है ॥

५४ वैदिक व्रत करने को महाव्याहृतियों से नित्य आप हवन करना चाहिये॥ और अहिंसा (हिंसा न करना) सत्यवर्त्ताव राखना क्रोधछोड़ना कठोरवचन न बोलना। इनकामोंका व्रती अवश्य करे ॥

५५ व्रतमें तीनवार दिनमें तीनवार रात्रिमें स्नान करना और स्त्री तथा शूद्र आदिमलीन जनों से वातचीत कभी न करना चाहिये ॥

५६ जिसपवित्र स्थानमें वा जिस आसनपर व्रतकरे वहीं विहरे और कहीं विहारकरने टहलने न जावे। अथवा यदिव्रतकरनें में बहुत अशक्त शरीर होजावे तो नीचे भूमिमे लेटजावे खाटपर न पड़े व्रत करनेवाला ब्रह्मचर्य्य के नियम धारण करे और आयेहुए गुरुदेव और द्विज महात्माओं की सेवाकरे ॥

५७ शक्तिके अनुकूल सावित्री (गुरुमन्त्र) का जपकरे शुद्धि करनेवालेवेदकेसूत्रोंका पाठकरे सबव्रतोंमेंआदरसे उक्तकर्मोंकोकरे।

उक्तप्रायश्चित्तेषु सर्वत्रवर्णव्यवस्थया प्रायश्चित्ताचरणमुक्तं तत्र शूद्रविषये विशेषमाह।

भगवानाङ्गिराः

तस्माच्छूद्रंसमासाद्य सदाधर्मपथे स्थितम्।
प्रायश्चित्तंप्रदातव्यं जपहोमविवर्जितम् ॥ ५८ ॥
शूद्रःकालेन शुध्येत्तु गोब्राह्मणहिते रतः।
दानैर्वाप्युपवासैर्वा द्विजशुश्रूषयाथवा ॥ ५९ ॥

जावालिः—

शूद्रं कृतैनसं प्राप्य सदा धर्मपथे स्थितम्।
प्रायश्चित्तं प्रदातव्यं वेदमन्त्रविवर्जितम् ॥ ६० ॥

मार्कण्डेयः—

कृच्छ्राण्येतानि कार्य्याणि सदा वर्णत्रयेण तु।

उक्त प्रायश्चित्तों में सर्वत्र वर्णव्यवस्था अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र के भेदसे प्रायश्चित्ताचरण कहा है वहां शूद्रोंके विषय में भगवान् अङ्गिरा जी विशेष कहते हैं—

५८ ब्राह्मणोंका भक्त शूद्र सर्वयत्नसे तारनेयोग्यहै इसकारण सदैव धर्ममार्ग में स्थिर रहने वाले शूद्रको पाकर जपहोम वर्जित प्रायश्चित्त देना चाहिये ॥

५९ शूद्रजो गौ और ब्राह्मणों की सेवामें रहेतो कालान्तर में शुद्ध होजाता है वा दानदेने वा उपवास करने अथवा द्विजों की सेवा करने से शूद्र शुद्ध होता है ॥

जावालि महर्षि कहते हैं—

६० सदाधर्म में रहने वाला जो शूद्र कदाचित् पापियों के सङ्गसे पाप करिबैठे तो वेदमन्त्रवर्जित प्रायश्चित्त उसको देना चाहिये ॥

मार्कण्डेय महर्षि कहते हैं—

६१ कृच्छ्रव्रत जो प्रायश्चित्तों में कहे हैं यह ब्राह्मण क्षत्रिय और

कृच्छ्रेष्वेतेषुशूद्रस्य नाधिकारोविधीयते ॥ ६१ ॥

अथ पुराणव्यवस्थया प्रायश्चित्तानि

बृहन्नारदीय पुराणे यथा—

यस्तुरागादिनिर्मुक्तो ह्यनुतापसमन्वितः ।
सर्वभूतदयायुक्तो विष्णुस्मरणतत्परः ॥ ६२ ॥
महापातकयुक्तो वा युक्तोवाप्युपपातकैः ।
सर्वैःप्रमुच्यते सद्यो यतो विष्णुरतं मनः ॥ ६३ ॥

अत्र विष्णुस्मरणतत्पर इति निर्विशेषोदानात्कामतोऽकामतो वा म्लेच्छादिसंसर्गप्राप्तानां शुद्धिमिच्छतां शुद्धिर्निराबाधमाना सिध्यत्येव ।

विष्णुपुराणे गङ्गास्नानेनापि शुद्धिरुक्ता यथा--

वैश्यको करना चाहिये इनमें शूद्रका अधिकार नहीं है

अब पुराण व्यवस्था से प्रायश्चित्त कहते हैं—

बृहन्नारदीय पुराण में लिखा है—

६२ जो राग आदिसे छूटा पुरुष किये हुए पापका पश्चात्ताप करताहुआ तप करता और प्राणिमात्र में दया करता विष्णु जीका निरन्तर स्मरण कररहा है ॥

६३ वह महापातकों (बड़े२ पातकों) से वा उपपातकों (छोटे-पातकों) से युक्त हो तो भी शीघ्र सबसे छूटजाता है क्योंकि-जिस कारण उसका मन विष्णु जी में रमिरहा है ॥

उक्त वाक्यमें 'विष्णुस्मरणतत्पर' यह निर्विशेषपद दियाहै इस कारण इच्छा वा अनिच्छा किसी प्रकार म्लेछादि पुरुषों से जिनको संसर्ग हुआ और वह शुद्धि चाहते हैं तो उनकी बिनारुकावट शुद्धि सिद्धहै पर पुराणसिद्धान्तानुसार विष्णु भक्ति होनाचाहिये क्योंकि विष्णु जीकी बिना भक्ति उक्त काम नहीं कहा है ॥

ज्ञानतोऽज्ञानतोवापि भक्त्याभक्त्यापिवाकृतम् ।
गङ्गास्नानं सर्वविधं सर्वपापप्रणाशनम् ॥ ६४ ॥
चान्द्रायणसहस्रैस्तु यश्चरेत् कायशोधनम् ।
पिबेद्यश्चापि गङ्गाम्भः समौ स्यातां नवासमौ ॥६५॥
भवन्ति निर्विषास्सर्पा यथा तार्क्ष्यस्य दर्शनात् ।
गङ्गाया दर्शनात्तद्वत् सर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ ६६ ॥

भविष्यत्पुराणे—

स्नानमात्रेण गङ्गायाऽऽपापं ब्रह्मवधोद्भवम् ।
दुराधर्षं कथं याति चिन्तयेद्यो वदेदपि ॥ ६७ ॥

विष्णु पुराण में गङ्गा जीके स्नान करनेसे भी शुद्धि कही जैसे ।

६४ ज्ञानसे वा अज्ञानसे भक्ति से वा विना भक्तिसे सर्व प्रकार गङ्गास्नान सबपाप अर्थात् बड़ा छोटा कैसाही पाप क्यों नहो किसी प्रकार की अशुद्धि क्योंन हो सब का नाश करदेता है ॥

६५ सहस्रों चान्द्रायण व्रतोंसे जो अपने शरीरकी शुद्धिकरता है और जो गङ्गाजी का जल पीरहा है यह दोनों समान होते हैं वा नहीं समान होते हैं॥ +

६६—जैसे गरुड़ जी के दर्शन से सर्प निर्विष (विषरहित) होजाते वैसे गङ्गाजी के दर्शन से मनुष्य सब पापोंसे छूटजाता है सब प्रकार शुद्ध होजाता है ॥

भविष्य पुराण में लिखा है ।

६७—गङ्गाजी के स्नान मात्र से ब्रह्महत्यासे हुआ महा पातक कैसे छूटता है ऐसा जो मन में चिन्तन करे वा कहेभी ॥

६८ उसका पाप मै कहता हूं करोरि ब्राह्मणों के मारने का पाप

+तात्पर्य यह है कि— सहस्रों चान्द्रायण व्रत करने वाला उसशुद्धि को नहीं पाता है जो गङ्गाजी के जलसे होती है ॥

तस्याहं प्रवदे पापं ब्रह्मकोटिबधोद्भवम् ।
स्तुतिमात्रमिमंमत्वा कुम्भीपाकेषु जायते ॥ ६८ ॥
आकल्पं नरकं भुक्त्वा ततो जायेत गर्द्दभः ॥ ६९ ॥

इत्यादिवचनैर्गङ्गास्नानमात्रं सकलपापशोधनं चतदेतत्पुराणमतानुयायिनां सुतरां निर्वाहायेति ॥ वैदिकमतानुयायिनांतु वैदिककर्मभिरेव निर्वाहोऽतः श्रौतसिद्धातानुकूलव्रताचरणाशक्तेन किं कर्त्तव्यमित्यत्र सकलसंशोधनमन्त्रानाह ।

योगी याज्ञवल्क्यः—

शुक्रियारण्यकजपो गायत्र्याश्चविशेषतः ।

उसको होता है । इस कहने का जो गङ्गाजी की स्तुति मात्र मानेता वह मनुष्य कुम्भीपाक नरको में जाता है ॥ * ॥

६९—और एक कल्प नरकदुःख भोगि पीछे गदहा होता है । इत्यादि वचनों से गङ्गाजी का स्नान मात्र सब पापों का दूर करने वाला और अच्छे प्रकार शरीर शुद्ध करने वाला निश्चित है सो यह पुराण मत मानने वालों को उत्तमता से निर्वाह के लिये है ।

वैदिक सिद्धान्तोंपर चलने वालोंका तो वैदिक कर्मोंसेही निर्वाह है इस कारण वेद सिद्धान्त के अनुकूल व्रतों के आचरण करनेको जो समर्थ नहीं है उसको क्या करना चाहिये इस अंश में समस्त शुद्धिकरनेवाले मन्त्रोंको योगी याज्ञवल्क्य जी कहते हैं ।

७०—शुक्रियारण्यक का जप और विशेष करि गायत्री का जप

---

* पौराणिक पक्षमानने वाले भाइयों को शोचना चाहिये पुराणसिद्ध गङ्गाजी का स्नान सब प्रकारकी सर्व अशुद्धियों को दूर करता एक गोते मारने से सोतेको जगालेने के समान सब पापोंको छुड़ाता है तब क्या कठिनता है हठ छोड़ि गङ्गाजी में स्नान कराय अनेकों तरसते हुए पुरुषों को प्रायश्चित्त कराने में विलम्ब क्योंकरना ॥

सर्वपापहराह्येते रुद्रैकादशिनी तथा ॥ ७० ॥

अस्यार्थः—

शुक्रियं-नाम विश्वानिदेवसवितरित्यादि । अरण्यकं ऋचं वाचं प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये० इत्यादि च वाजसनेयके पठ्यते तयोर्जपो महापातकादिपातक हरस्तथा गायत्र्याश्च जपः प्रत्यहं रुद्र्या एकादश पाठाश्च सर्व एते सकलपापहरा इति ।

सावित्रीमन्त्रजपो महापातके लक्षं पातकानुपपातकयोर्दशसहस्रमुपपातके सहस्रम् प्रकीर्णेषु शतमित्येवं विशेषेण सर्वपापहरो भवति ।

तद्यथाह शङ्खाचार्यः ।

शतं जप्त्वा तु सावित्री स्वल्पपातकनाशिनी ।
तथा सहस्रं जप्त्वा तु पातकेभ्यः प्रमोचनी ॥७१॥

यह समस्त पातकों को दूर करने वाले हैं तथा रुद्रैकाशिनी जप (रुद्रैकादशिनी, षडङ्ग रुद्री के नित्य ग्यारह २ पाठ) समस्तपातक दूर करता है। गायत्री मन्त्रकाजप, पातकों में एकलक्ष, अनुपातकों में दशसहस्र, उपपातको में एक सहस्र और प्रकीर्ण पातकोंमें शत वार गायत्री जप होना चाहिये इस विशेष से सबपापों को दूर ने वाला गायत्री जप होता है। जैसे

शङ्ख आचार्य कहते हैं ।

७१—शतवार का गायत्री जप छोटेर पापोंको विनाश करता है एक सहस्र जपने से गायत्री मनुष्य को पापोंसे छुड़ा देती है ॥

जप्त्वादशसहस्रैस्तु सर्वकिल्विषनाशिनी ।
लक्षंजप्त्वातुसादेवी महापातकनाशिनी ॥ ७२ ॥
सुवर्णस्तेयकृद्विप्रो ब्रह्महागुरुतल्पगः ।
सुरापश्च विशुध्यन्ति लक्षं जप्त्वा न संशयः ॥७३॥

चतुर्विंशतिमतेपि सावित्रीजपविभागः—

गायत्रीं योजपेत्कोटिं ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।
लक्षाशीतिं जपेद्यस्तु सुरापानात् प्रमुच्यते॥ ७४ ॥
पुनाति हेमहर्तारं गायत्र्या लक्षसप्ततिः ।
गायत्र्यालक्षषष्ट्यातु मुच्यतेगुरुतल्पगः ॥ ७५ ॥

भगवान् मनुः—

वेदाभ्यासोन्वहंशक्त्या महायज्ञक्रियाक्षमाः ।

---

७२ दश सहस्र जपने से गायत्री साधारण सर्व पापों को नाश करती है और एकलक्षसे बड़े२ पातकों को विनाश करदेती है कोई अशुद्धि रह नहीं जाती है ॥

७३—एकलक्ष गायत्री जपकरि सुवर्ण की चोरी करने वेद त्याग करने और गुरूजी की स्त्री के साथ गमन करने वाला भी विप्र पातक से छूटिकरि शुद्धहोजाता है। इसमें संशय नहीं है।

७४--गायत्री को एक करोड़ जो जपता है वह ब्रह्महत्या को नष्ट करदेता है शुद्ध होजाता अस्सीलाख जपैतो सुरापीने के दोष से छूटजाता और शुद्ध होजाता है ॥

७५—गायत्री को सत्तर लाख जप सुवर्ण की चोरी करने वाले को पवित्र करता है साठलाख गायत्री के जपसे गुरूकी स्त्रीसे भोग करने वाला शुद्ध होता है ॥

७६--प्रतिदिन शक्तिके अनुकूल वेदपाठ करना और पञ्चमहा यज्ञ (ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ,पितृयज्ञ, नृयज्ञ) इनको जो करते

नाशयन्त्याशुपापानि महापातकजान्यपि ॥ ७६ ॥

योगीयाज्ञवल्क्येऽपि—

वेदाभ्यासरताः क्षान्ताः पञ्चयज्ञक्रियापराः ।
नाशयन्तीहपापानि महापातकजान्यपि ॥ ७७ ॥
वेदस्वीकरणंपूर्वं विचारोऽभ्यसनंतपः ।
तद्दानंचैवविप्रेभ्यो वेदाभ्यासोहिपञ्चधा ॥ ७८ ॥

इति वैदिकसिद्धान्तेन साधारणप्रायश्चित्तानि ।

अथवर्णत्वविचारः—

श्रौतस्मार्त्तसिद्धान्तसिद्धप्रायश्चित्तेषु ब्राह्मणादिवर्ण विभागकल्पनया महर्षिभिर्व्यवस्था निरूपिता ते च ब्राह्मणादिवर्णास्सावित्रीमन्त्रसंस्कृता एव । मनुः—

हैं वह महापातकोंको (बड़े २ पापों) को नष्टकरि शुद्ध होजाते हैं ॥

७७—जो वेदाभ्यास करते और पञ्चमहायज्ञ करते हैं वह महापातकों नष्टकरि शुद्ध होजाते हैं ॥

वेदाभ्यास क्या है इसको याज्ञवल्क्य जी कहते हैं ।

७८—वेद का पढ़ना विचारना उसके अनुकूल तपकरना और दूसरोंको वेदपढ़ाना यह पांच प्रकारका वेदाभ्यास कहाता है।

यह वैदिक सिद्धान्त के अनुकूल साधारण प्रायश्चित्त हैं ॥

चातुर्वर्ण्यविचार

श्रुतिस्मृतिके सिद्धान्तों से सिद्ध प्रायश्चित्तों मे ब्राह्मणादिवर्ण विभाग कल्पना से महर्षियों ने व्यवस्था निरूपण की है और वह ब्राह्मणादि वर्ण सावित्री मन्त्र से संस्कार पाये हुये (जिनको यज्ञोपवीत होकर गुरू से सावित्री मन्त्रका उपदेश हुआ होवे) ही महर्षियों ने माने हैं जैसा मनुजी कहते हैं !

आषोडशाद्ब्राह्मणस्य सावित्रीनातिवर्त्तते ।
आद्वाविंशात्क्षत्रबन्धो राचतुर्विंशतेर्विशः ॥ ७९ ॥
अतऊर्ध्वंपतन्त्येते यथाकालमसंस्कृताः ।
सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः ॥ ८० ॥
अयाज्ययाजनैश्चैव नास्तिक्येनच कर्म्मणाम् ।
कुलान्याशुविनश्यन्ति यानिहीनानिमन्त्रतः ॥ ८१ ॥
मन्त्रतस्तुसमृद्धानि कुलान्यल्पधनान्यपि ।
कुलसंख्यांचगच्छन्ति कर्षन्तिचमहद्यशः ॥ ८२ ॥
अत्र मन्त्रपदेन सावित्रीमन्त्रस्यैव ग्रहणम् । यथाह

भगवान्मनुः—

७८—सोलहवर्ष तक ब्राह्मण का बाईसवर्षतक क्षत्रिय का और चौवीसवर्ष तक वैश्य को यज्ञोपवीत संस्कार और सावित्री मन्त्र पानेका अधिकार है उक्त समय तक तीनो वर्णोको यज्ञोपवीत संस्कार होजाना चाहिये ॥

८०—इसके उपरान्त अपने२ समय पर यज्ञोपवीत संस्कारऔर सावित्री मन्त्रको न पाये हुए ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य सावित्रीपतित व्रात्य और श्रेष्ठ पुरुषों में निन्दापाने वाले होते हैं ॥

८१—अयोग्य कुलों को यज्ञादिक कर्मोके कराने और यज्ञादिकर्मो के न मानने से अच्छे कुल शीघ्रनष्ट होजाते और जो सावित्री मन्त्रसे हीन हैं जिनको मन्त्रोपदेश नहीं हुआ वह कुलशीघ्र नष्ट होजाते हैं ॥

८२ जो ब्राह्मणादि वर्ण मन्त्रसमृद्ध हैं सावित्रीमन्त्रोपदेश पाये हैं वहचांहे थोड़े धनवालेभीहों पर कुलकी गणना को पहुंचते हैं अर्थात् सावित्री मन्त्र का उपदेश पाकर ब्राह्मणादि वर्ण वर्णधर्म को प्राप्त होते और वह बहुत यशस्वी होते हैं ॥

उक्त श्लोकों मे जो मन्त्र पद आया है उससे सावित्री (गायत्री गुरुमन्त्र) काही ग्रहण है जैसे भगवान् मनुजी कहते हैं—

एतदर्चयाविसंयुक्तः कालेनक्रियपयास्त्वया ।
ब्रह्मक्षत्रियविड्योनि गर्हणांयातिसाधुषु ॥ ८३ ॥

पुराणवादिनस्तु रामकृष्णादिमन्त्रग्रहणं तत्पूजनस्यैवावश्यकतां निदर्शयन्ति तद्यथा काशीखण्डे—अकामस्सर्वकामो वा मोक्षकामउदारधीः । तीव्रेण भक्तियोगेन यजेतपुरुषंपरम् ॥ ८४ ॥ काशी० अ० १९ अत्र परपुरुष इत्यनेन विष्णोर्ग्रहणं तेन विष्णोस्त दवताराणां च मन्त्रग्रहणतत्पूजनं चानुबोधितं तदेतत् काशीखण्डनिर्मातुर्विष्णौ तीव्रभक्तिविषयकमेव दृश्यते नहि सावित्रीव्यतिरिक्तकल्पितमन्त्रग्रहणेन ब्राह्मणादिवर्णत्वसंभवो नचापि सावित्री

८३—इस सावित्री मन्त्र का उपदेश अपने २ समय में जिनको नहींहुआ और जिन्होंने अपने वैदिककर्म्म जो नित्य करने को हैं नही जाने वह ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य धर्मात्मा पुरुषोंमे निन्दापाते हैं। यह धर्मशास्त्र के प्रधान वक्ता भगवान् मनुजी का सिद्धान्त है।

पुराणवादी लो कलियुगमें “ ओं रामायनमः, ओं कृष्णायनमः ” इत्यादि मन्त्र ग्रहणकरने और रामकृष्णादिकों के पूजन करनेकी आवश्यकता दिखलाते हैं जैसे काशीखण्डके उन्नीसवें अध्यायमे कहाहै॥

८४—अकाम, सकाम वा मोक्षकाम (अनिच्छा वा इच्छा रखने वाला, मोक्षचाहनेवाला) उदार बुद्धिपुरुष अत्यन्तभक्ति से परमपुरुष नारायण का पूजन करे ॥ उक्तवाक्य में परपुरुष शब्दों से विष्णु का ग्रहण है इसकारण विष्णुभगवान् के प्रसिद्ध अवतारों कापूजन और मन्त्र ग्रहण करना वहां समझाया गया है। यह विष्णु भगवान् में काशीखण्ड के बनाने वालेकाही अत्यन्त भक्तिविषय दीखता है क्योंकि सावित्री मन्त्रके विना और मन्त्रोंके ग्रहणकरने से ब्राह्मणादि वर्णधर्म का कोई अधिकारी नहीं होसकता और न

रहितस्य शूद्रसमस्य नाममात्रेण प्रसिद्धस्य ब्राह्मणादेर्वर्णत्वप्रयुक्तानुष्ठानाधिकारोऽस्ति ततः सावित्रीपतितानां ब्राह्मणादिनाम्ना प्रसिद्धानां सर्वथा सावित्रीरहितानां च शुद्धये देशकालवयश्शक्त्याद्यपेक्ष्य यथान्यायं प्रायश्चित्तकल्पना कर्त्तव्या—

तद्यथा भगवान् मनुः—

अनुक्तनिष्कृतीनां तु पापानामपनुत्तये।
शक्तिं चावेक्ष्य पापं च प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् ८५॥

योगी याज्ञवल्क्यः—

देशं कालं वयश्शक्तिं पापं चावेक्ष्य यत्नतः।
प्रायश्चित्तंप्रकल्प्यंस्याद् यत्रचोक्तानानिष्कृतिः॥ ८६

सावित्री मन्त्र वा यज्ञोपवीतादि संस्कार के विना शूद्रसमाननाममात्रसे प्रसिद्ध ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यको वर्ण विभाग से कहेहुए व्रतादि करनेका अधिकार नहींहै इसकारण जो सावित्रीपतित ब्राह्मणादि नामसे प्रसिद्ध औरसर्वथा सावित्रीरहित (जिनको सावित्रीमन्त्र का कभी संयोग होनेवाला नहीं) उनकी शुद्धि के लिये देशकाल अवस्था और शक्ति आदिको विचारि प्रायश्चित्त की कल्पना करना उचित है जैसा भगवान् मनुजी कहते हैं—

८५-जिनका प्रायश्चित्त न कहाहो उनके पापदूरकरने औरशुद्धि होनेके लिये सामर्थ्य और पाप विचार के प्रायश्चित्त कल्पनाकरे॥

योगी याज्ञवल्क्य जी कहते हैं।

८६—जिस विषय में धर्म शास्त्रकारोंने प्रायश्चित्त न कहा हो वहां देश (कश्मीर आदि जहांबहुत स्नान पाप मरजाने काभय है) समय (शीतआदि) अवस्था (बालक ज्वान वृद्ध) सामर्थ्य (बल वा धन आदि) और पापको यत्नके साथ विचारि प्रायश्चित्त की कल्पना करना चाहिये॥

विश्वामित्रः—

जातिशक्तिगुणापेक्ष्यं सकृद्बुद्धिकृतंतथा।
अनुबन्धादिविज्ञाय प्रायश्चित्तंप्रकल्पयेत् ॥ ८७ ॥

पराशरः—

दुर्बलेऽनुग्रहःकार्य स्तथाबालशिशुवृद्धयोः।
ततोन्यथाभवेद्दोष स्तस्मादानुग्रहीभवेत् ॥ ८८ ॥
भगवान् मनुर्मानससन्तापेनापि प्रायश्चित्तमाह
अज्ञानाद्यदिवाज्ञानात् कृत्वाकर्मविगर्हितम्।
तस्माद्विशुद्धिमन्विच्छन् द्वितीयंनसमाचरेत् ८९
कृत्वापापंहिसंतप्य तस्मात्पापात्प्रमुच्यते।

विश्वामित्र जी कहते हैं।

८७—जाति सामर्थ्य गुण इन बातोंको विचारि कारि बुद्धिसे निश्चयकिया और प्रायश्चित्तकी सामग्री कहांतक करसकता है इत्यादि अच्छे प्रकार जानिकारि प्रायश्चित्त की कल्पना करना चाहिये॥

भगवान् पाराशर जी कहते हैं।

८८—जो दुर्बल हो रोगी आदि हो उसके निमित्त प्रायश्चित्त की कल्पना करने में अनुग्रह करना चाहिये। अत्यन्त कठिन जो उनसे नहोसके ऐसा प्रायश्चित्त न दे तथा बालक और वृद्धके निमित्त भी अनुग्रह करना चाहिये इससे अन्यथा वर्त्ताव करने में दोष होना संभव है इसकारण प्रायश्चित्त देनेवाला दयावान् हो॥

भगवान् मनुजी मानसताप से भी प्रायश्चित्त होना कहते हैं।

८९ अज्ञान से यदि विज्ञान से निन्दित कर्म करके उससे निश्शेष शुद्धि चांहताहो तो उस कामको दूसरी बार न करे॥

९० यदि मनुष्य पापकरि के पीछे पछिताता और व्याकुल होता उसके मनको कष्टहोता है तो उस पाप से वह छूटिजाता है अर्थात्

नैवंकुर्य्यांपुनरिति निवृत्त्यापूयतेतुसः ॥ ९० ॥

योगी याज्ञवल्क्येपि—

पश्चात्तापो निराहारस्सर्वेते शुद्धिहेतवः ॥ ९१ ॥
अन्यच्च—ख्यापनेनानुतापेन वेदार्थाभ्यसनेनच ।
पापकृन्मुच्यते पापात्तथा दानेनचापदि ॥ ९२ ॥
यथायथानरोऽधर्मं स्वयंकृत्वानुभाषते ।
तथातथात्वचेवाहि स्तेनाधर्मेण मुच्यते ॥ ९३ ॥
यथायथामनस्तस्य दुस्कृतंकर्मगर्हति ।
तथातथाशरीरंतत् तेनाधर्मेणमुच्यते ॥ ९४ ॥

पीछे किये हुए को मानस कष्टभोग से नष्ट करदेता और आगे को करने से रुकिजाता इस रुकावट से वह शुद्ध होजाता है ॥

योगी याज्ञवल्क्य जी भी कहते हैं—

९१ पश्चात्ताप करना और निराहार व्रत करना इत्यादि उपाय शुद्धि के कराने वाले हैं ।

और भी कहा है—

९२ मानस कष्ट सह बार २ कहने पछिताने और वेद के पाठ करने से पाप करने वाला पाप से छूटता है वैसेही आपत्ति कालमें दान देने से भी पाप से छूटजाता है ।

९३ मनुष्य अधर्म करके जैसे २ आप पछिताता और बार कहता उसका मन दुःखी होता है वैसे २ वह जिस प्रकार सांप अपनी केंचुली का छोड़देता है ऐसे उसपाप से छूटिजाता है ॥

९४ जैसे २ उस मनुष्यका मन पश्चात्ताप करि २ कियेहुए दुष्कर्म की निन्दा करता है उसी २ प्रकार उसका शरीर उस अधर्म से छूटिजाता है ॥

यत्तुस्मृत्यन्तरे—

नाभुक्तंक्षीयतेकिञ्चि त्कल्पकोटिशतैरपि ।
अवश्य ... ॥ ९५ ॥

तदेत ... भवात्
पश्चात्त ... हनेन च
पापफ ... शुद्धिप्रा-
प्तिश्च ... पि वर्ण-
विभागे ... समापन्न
सावित्र ... हकरमि-
ति। अ ... त्वाभि
मानि ... -पते न

और ... त है-

९५ ... नष्ट नहीं होता है ... होता है। यह वाक्य ... कि प्राय-श्चित्त कर ... ाता है प-श्चात्तापमें ... के अत्यन्त सहने से पाप फल भोगनेका सम्भव है। इससे भी अच्छे प्रकार पाप निवृत्ति और उत्तम शुद्धि की प्राप्ति होजाती है। धर्म शास्त्रोंमें नित्य २ करने योग्य कर्मोंका निरूपण भी ब्राह्मणादि वर्ण विभाग से ही है। इस कारण यह उक्त विषय समस्त विचारि करि जो यज्ञोपवीत संस्कार और सावित्री मन्त्र को पाकरि वर्ण धर्म के अ-धिकारी होचुके हैं उन्हीं केलिये वर्ण धर्म से कहेहुए कर्मोंका आ-चरण करना उत्तम सुख देनेवाला है। और जो यज्ञोपवीत और सावित्री मन्त्र रहित नाममात्रसे ब्राह्मणादि वर्ण धर्मके अभिमानी हैं उनको चान्द्रायणादि व्रताचरण करने का अधिकार नहीं प्राप्त है

नैवंकुर्यां पुनरिति ... ॥

पश्चात्तापो ... ॥

अन्यच्च— ... ।

पापकृन्... २ ॥

यथायथा ...

तथातथा ... ॥

यथायथा ...

तथातथा ...

पीछे किये ... गे को

करने से ...

... उपाय

९१ पश्च...

शुद्धि के क...

और भी कहा है—

६२ मानस कष्टथय बार २ कहने पछिताने और वेद के पाठ करने से पाप करने वाला पाप से छूटता है वैसेही आपत्ति कालमें दान देने से भी पाप से छूटजाता है।

६३ मनुष्य अधर्म करके जैसे २ आप पछिताता और बार कहता उसका मन दुःखी होता है वैसे २ वह जिस प्रकार सांप अपनी केंचुली को छोड़देता है ऐसे उसपाप से छूटिजाता है ॥

६४ जैसे २ उस मनुष्यका मन पश्चात्ताप करि २ कियेहुए दुष्कर्म को निन्दा करता है उसी २ प्रकार उसका शरीर उस अधर्म से छूटिजाता है ॥

यत्तुस्मृत्यन्तरे—

नाभुक्तंक्षीयतेकिञ्चि त्कल्पकोटिशतैरपि ।
अवश्यमेवभोक्तव्यं कृतंकर्म्मशुभाशुभम् ॥ ९५ ॥

तदेतदप्रायश्चित्तपरम् । प्रायश्चित्तेतद्भोगसंभवात् पश्चात्तापेपि मानससंतापजन्याधिकष्टसंसहनेन च पापफलभोगसंभवाच्च सुतरांपापनिवृत्तिस्संशुद्धिप्राप्तिश्च धर्म्मशास्त्रेषु प्रात्याहिककर्म्मनिरूपणमपि वर्णविभागेनैवदृश्यते तदेतत्सर्वंविचिन्त्यवर्णत्वमापन्न सावित्रीसंस्कृतेभ्यएववर्णप्रयुक्तानुष्ठानंश्रेयस्करमिति। अथये सावित्रीरहितानाममात्रेण ब्राह्मणत्वाभिमानिनस्तेषां चान्द्रायणव्रते नाधिकारो लभ्यते न

और जो धर्म्म शास्त्र बनाने वालों का यह सिद्धान्त है–

९५ करोड़ों कल्पों से भी किया हुआ कर्म विना भोगे नष्ट नहीं होता है पुण्य वा पाप जो कुछ किया है अवश्य भोगने होता है। यह वाक्य प्रायश्चित्त के विना हुए समझना चाहिये क्योंकि प्रायश्चित्त करने में कष्ट भोगने से पापकर्म का फल भोग होजाता है पश्चात्तापमें भी मानस संतापसे जो कष्टउत्पन्न होता है उसके अत्यन्त सहने से पाप फल भोगनेका सम्भव है। इससे भी अच्छे प्रकार पाप निवृत्ति और उत्तम शुद्धि की प्राप्ति होजाती है। धर्म शास्त्रों में नित्य २ करने योग्य कर्मोंका निरूपण भी ब्राह्मणादि वर्ण विभाग से ही है। इस कारण यह उक्त विषय समस्त विचारि करि जो यज्ञोपवीत संस्कार और सावित्री मन्त्र को पाकरि वर्ण धर्म के अधिकारी होचुके हैं उन्हीं केलिये वर्ण धर्म से कहेहुए कर्मोंका आचरण करना उत्तम सुख देनेवाला है। और जो यज्ञोपवीत और सावित्री मन्त्र रहित नाममात्रसे ब्राह्मणादि वर्ण धर्मके अभिमानी हैं उनको चान्द्रायणादि व्रताचरण करने का अधिकार नहीं प्राप्त है

च ते वेदादिपाठे नापि सावित्रीमन्त्रजपे शक्ताः अतः सावित्र्या संस्कृतानामसंस्कृतानां साम्प्रतिकब्राह्मणादीनां सर्वथासावित्रीरहितानां च मालिन्यमाप्तानां संशुद्धये यथायोग्यं प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् अत्रांशे पुराणपक्षाश्रयाणां समुद्रगानां गङ्गाद्यापगानां स्नानं हरिकीर्तनमुपवासादि सर्वेषां शुद्धिजनकम् । वैदिकपक्षाश्रयाणां सावित्रीसंस्कृतानां प्राप्तसंस्काराणां चान्द्रायणादिव्रताचरणं सावित्रीजपोवेदपाठादिशुद्धिकरमप्राप्तसंस्काराणां यथाकथञ्चिदुपवासाद्याचरणं ब्राह्मणादिद्वारावेदमन्त्रैर्मार्जनमेव शुद्धिसम्पादकमिति शास्त्रशैलीविमर्शनशालिनां सुतरां निश्चयः ॥

और न वे वेदादि के पाठ करते न सावित्री मन्त्र के जपनेमें समर्थ हैं इस से सावित्री संस्कृत और सावित्री असंस्कृत वर्तमान समय के ब्राह्मणादिवर्ण और सर्वथा सावित्री रहित जो पुरुष स्त्रीबालक मलीनताको प्राप्त हुए हैं उनकी उत्तम शुद्धि के लिये यथायोग्य (अर्थात् पूर्वोक्त प्रकारों के अनुकूल) प्रायश्चित्त का निश्चय करना चाहिये। इस अंशमें पुराण पक्षके मानने वालोंको समुद्र में मिलने वाली गङ्गा आदि नदियों का स्नान हरि कीर्त्तन और उपवास आदि सब की शुद्धि करनेवाला है ऐसा अनुमान होता है। वैदिक पक्षका आश्रयकरने वाले सावित्री मन्त्र से संस्कार पायेहुए ब्राह्मणादि वर्णों को चान्द्रायणादि व्रतों का आचरण करना सावित्री मन्त्र जप वेद पाठ आदि शुद्धि करने वाला है और जिनका सावित्री मन्त्र संस्कार नहीं हुआ उन नाम मात्र के ब्राह्मणादि वर्णोंको जैसे कैसे हूं उपवास आदि करना और ब्राह्मणादि द्वारा वेद मन्त्रों से मार्जन होना शुद्धि उत्पन्न करने वाला है। यह शास्त्रों की शैली विचारशील रखने वालों का अवश्य निश्चय है।

अथ प्रायश्चित्तोत्तरकर्म्म

एनस्विभिरनिर्णीतैर्नार्थं किञ्चित्समाचरेत् ।
कृतनिर्णेजनांश्चैव नजुगुप्सेतकर्हिचित् ॥ ९६ ॥
प्रायश्चित्तेविनीतेतु तदातेषांकलेवरे ।
कर्त्तव्यःसूत्रसंस्कारो मेखलादण्डवर्ज्जितः ॥ ९७ ॥
संस्कारान्तेच विप्राणां दानंधेनुश्चदक्षिणा ।
दातव्यं शुद्धिमिच्छद्भिरश्वगोभूमिकाञ्चनम् ॥ ९८ ॥
तदासौ स्वकुटुम्बानां पंक्तिंप्राप्नोति नान्यथा ।
स्वभार्य्यांगन्तुमिच्छेत्तु गच्छेश्चैवविशुद्धितः ॥ ९९ ॥
इतिमहर्षिर्देवलः ।

अब प्रायचित्त के पीछे क्या करना चाहिये इसको कहते हैं—

९६ जिन मलीनजनोंने प्रायचित्त नहींकिया उन मैले कुचैलों के साथ कोई व्यवहार न करना चाहिये और जिन्हों ने प्रायचित्त कर लिया शुद्ध होगये उनसे घृणा न करना चाहिये ।

९७ यदि प्रायश्चित्त करनेवाला पुरुष ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य हो पूर्व यज्ञोपवीतादि संस्कार उनका हुआहो पीछे प्रायश्चित्त योग्य हुए हों तो प्रायचित्त होजाने पर उनके शरीर में मेखला दण्ड को छोड़ के यज्ञोपवीत संस्कार फिर से करना चाहिये ।

९८ इस यज्ञोपवीत संस्कार के अन्त में शुद्धि की इच्छा करते हुए पुरुषों को चाहिये कि—ब्राह्मणों को गौ. दक्षिणा. अश्व. भूमि. सुवर्ण आदि पदार्थों का दान देवे ।

९९—उक्त प्रकार से प्रायश्चित्त होजाने और शुद्धि होजाने पीछे यह प्रायश्चित्त से शुद्धहुआ पुरुष अपने कुटुम्बियों की पङ्क्ति को प्राप्त होसक्ता है अन्यथा नहीं और अपनी पूर्व स्त्री के पास जाना चाहे तो शुद्धि से पीछे कुटुम्बियों में मिलाहुआ जासकता है । यह महर्षि देवलजी का सिद्धान्त है ।

अथ प्रायश्चित्तफलम्—

एवमाचरितेसम्यक् प्रायश्चित्तेनरोत्तमः ।
सर्वकर्म्माधिकारीस्यात् कृतार्थःसर्वकर्म्मसु ॥१००॥

इति ज्वालादत्तसंगृहीतः प्रायश्चित्तादर्शस्य प्रथमभागः समाप्तः ॥ नगशरनवचन्द्रैस्सम्मिते विक्रमीये शरदिधवलपक्षे ज्येष्ठमासेसुधांशौ तिथिवरवटसावित्र्यामयंपूर्तिमायात्मुनिवचनविमर्शेना न्वितःशुद्धिदर्शः ॥

संवत् १९५७ ज्येष्ठमासेकृष्णपक्षेऽमावस्यायां सोमवासरेपूर्तिमायात् ॥

अब प्रायश्चित्त करने का मुख्य फल क्या है उसको कहते हैं-

१०० ऐसे अच्छे प्रकार प्रायश्चित्त कियाहुआ नरोत्तम शुद्धपुरुष सब काम का अधिकारी होसकता सब कामों में कृतार्थ होता है ।

यह ज्वालादत्त का संग्रह कियाहुआ प्रायश्चित्त का प्रथमभाग समाप्त हुआ ॥



पुस्तक लौटाने की तिथि अन्त में अङ्कित है । इस तिथि को पुस्तक न लौटाने पर दस नये पैसे प्रति पुस्तक अतिरिक्त दिनों का अर्थदण्ड आप को लगाया जायेगा ।

1 AUG 1983			
25 SEP 1996			

५०००.११.१४।